E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2020; 2(3): 862-866
Received: 24-04-2020
Accepted: 28-05-2020

सुरेन्द्र कुमार गुप्ता
हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, कोलायत जिला बीकानेर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
सुरेन्द्र कुमार गुप्ता
हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, कोलायत जिला बीकानेर, राजस्थान, भारत

कबीरदास का भक्ति आंदोलन में योगदान

सुरेन्द्र कुमार गुप्ता

DOI: https://doi.org/10.33545/27068919.2020.v2.i3l.1011

सारांश
कबीर के अब तक के अध्ययन का सर्वेक्षण करते हुए इस अध्ययन की आधारभूत मान्यताओं को स्पष्ट किया गया है तथा विभिन्न विद्वानों द्वारा कबीर के मूल्यांकनों का विश्लेशण किया गया है। कबीर के वंश को सदय धान्तरित योगी जाति मानने की अर्थपरिणतियों का निस्पण करते हुए इस मान्यता के औचित्य पर विचार किया गया, कबीर की भक्ति के सामाजिक अर्थ की समझ के लिए उन्हें जातीय गठन की ऐतिहासिक प्रक्रिया के संदर्भ में देखने का प्रस्ताव दिया गया है। इसके साथ ही स्वामी रामानंद के साथ कबीर के संबंध की समस्या और इससे संबद्ध समस्या–कबीर का जीवन समय निर्धारण – पर भी विचार किया गया है।

मुख्यशब्दः कबीर, भक्ति, काव्य, भक्ति आंदोलन, ऐतिहासिक प्रक्रिया

प्रस्तावना
कबीर संतमत के प्रवर्तक और संत काव्य के सर्वश्रेष्ठ कवि है। विलक्षण के धनी और समाज–सुधारक संत कबीर हिन्दी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखते है। इनके समान सशक्त और क्रांतिकारी कोई अन्य कवि हिन्दी साहित्य में दिखलाई नहीं पड़ता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कबीरदास के काव्य और व्यक्तित्व का आकलन करते हुए लिखा है– कबीर की उक्तियों में कहीं–कहीं लक्षण, प्रभाव और चमत्कार है। प्रतिभा उनमें बड़ी प्रखर थी, इसमें संदेह नहीं। कबीर की विलक्षण प्रतिभा पर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है – हिन्दी साहित्य के हजार वर्षों के इतिहास में कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर लेखक उत्पन्न नहीं हुआ। भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। उनके संत रूप के साथ ही उनका कवि रूप बराबर चलता रहता है।
कबीर की जन्म तिथि के संबंध में कई मत प्रचलित हैं, पर अधिक मान्य मत – डॉ. श्यामसुन्दर दास और आचार्य रामचंद्र शुक्ल का है। इन विद्वानों ने कबीर का जन्म सम्मत 1456 वि. (सन् 1389 ई.) माना है। इनके जन्म के संबंध में कहा जाता है कि कबीर काशी की एक ब्राह्मणी विधवा की संतान थे। समाज के डर से ब्राह्मणों ने अपने नवजात पुत्र को एक तालाब के किनारे छोड़ दिया था, जो नीरू जुलाहे और उसकी पत्नी नीमा को जलाशय के पास प्राप्त हुआ। विद्वानों ने मतानुसार कबीर का अवसान मगहर में संवत 1575 वि. (सन् 1518 ई.) में है।
कबीर की जितनी भी रचनाएं मिलती हैं, उनके शिष्यों ने इन्हें बीजक नामक ग्रंथ में संकलित किया है। इसी बीजक के तीन भाग है – साख, शबर और रमेनी। साखी में संग्रहित साखियों की संख्या 809 हैं। सबद के अंतर्गत 350 पद संकलित हैं। साखी शब्द का प्रयोग कबीर ने संसार की समस्याओं को सुलझाने के लिये किया है। सबद कबीर के वे पद है। रमैनी के ईश्वर संबंधी, शरीर एवं आत्मा उद्धार संबंधी विचारों का संकलन है। कबीर निर्गुण भक्ति मार्ग के अनुनायी थे और वैष्णव भक्त थे। रामानंद से शिष्यत्व ग्रहण करने के कारण कबीर के हृदय में वैष्णवों के लिये अत्यधिक आदर था। कबीर ने धार्मिक पाखण्डों, सामाजिक कुरीतियों, अनाचारों, पारंपरिक विरोधों आदि को दूर करने का सराहनीय कार्य किया है। कबीर की भाषा में सरलता एवं सादगी है, उसमें नूतन प्रकाश देने की अद्भुत शक्ति है। उनका साहित्यिक जन–जीवन को उन्नत बनाने वाला, मानवतावाद का पोषक, विश्व–बंधुत्व की भावना जागृत करने वाला है। इसी कारण हिन्दी संत काव्यधारा में उनका स्थान सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।
विद्वानों के बीच कबीर पर बहस का प्रमुख मुद्दा बना रहा है कि उनकी भक्ति एवं उनसे व्यन्त सामाजिक विचार विदेशी पद्धति के है, पा तो पीसदी भारतीय परम्परा के इस बहस का मूल ढांचा कुल मिलाकर भारत से सांस्कृतिक विकास को धार्मिक द्वैत मात्र का परिणाम समझने का रहा है। इस ढांचे में विदेशीपन इस्लाम से जुड़ता है, व भारतीय परंपरा हिन्दू या पीठ धर्म से, कबीर की भक्ति को विदेशी पद्धति मानने वाले विद्वान उनके तत्ववाद पर सभी अप्रवरवाद और प्रेम तत्व पर तमनुफका प्रभाव देखते हैं तो कबीर को श्सी पीसदी भारतीय परंपरा में स्थापित करने वाले विद्वान

भक्ति आंदोलन के स्वरूप विकास में ही इस्लाम का विशेष योगदान नहीं मानते। दोनों वाँ के विद्वानों के लिए जातीयता की अवधारणा धर्ममत से निर्धारित होती है।

कबीर काव्य की विशेषताएँ

भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना के रूप में भक्ति आन्दोलन को देखा–परखा जाता है। यह इतिहास की महत्वपूर्ण घटना निम्नलिखित विशेषताओं के कारण है –

ईश्वर के समक्ष सबकी समानता

भक्ति आन्दोलन का यह एक ऐसा वैचारिक आधार है जिसके माध्यम से वह ऊँच–नीच एवं जाति और वर्ण–भेद के आधार पर विभाजित मानवता की समानता को एक नैतिक और मजबूत आधार प्रदान करते हैं। समाज में व्याप्त असमानताओं का आधार भी ईश्वर की भक्ति को बनाया गया था– भक्ति संतों ने उन्हीं के हथियारों से उन पर वार किया और कहा कि –'ब्रह्म' के अंश सभी जीव हैं तो फिर यह विषमता क्यों? कि किसी को ईश्वर उपासना का सम्पूर्ण अधिकार और किसी को बिल्कुल नहीं, इतना ही नहीं इसी आधार पर समाज को रहन–सहन, खान–पान, छुआ–छूत एवं आर्थिक विषमताओं से विभाजित किया गया था। भक्तों ने चाहे वे निर्गुण हों चाहे सगुण सभी ने ईश्वर के समक्ष मानव मात्र की समानता को एक स्वर से स्वीकार किया।

जाति–प्रथा का विरोध

'जाति प्रथा' समाज की एक ऐसी बुराई थी जिसके चलते समाज के एक बड़े वर्ग को मनुष्यत्व के बाहर का दर्जा मिला हुआ था। 'अछूत', 'शूद्र', 'अन्त्यज', 'निम्नतम' श्रेणी के मनुष्यों का ऐसा समूह था जिसे मनुष्यत्व की मूलभूत पहचान भी प्राप्त नहीं थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्ग में भी जातिगत श्रेष्ठता और सामाजिक व्यवस्था में उच्च श्रेणी के लिए संघर्ष होते रहते थे। भक्ति संतों ने मनुष्यता के इस अभिशाप से मुक्ति की लड़ाई पूरी ताकत से लड़ी। कबीर जब "ना हिन्दू ना मुसलमान" की बात करते हों या किसी जाति विशेष के विशिष्ट अधिकारों पर चोट करते हों जो उन्हें जातिगत आधार पर मिले हों तो वे वास्तव में जाति प्रथा की इसी वैचारिक धरातल को तोड़ना चाहते हैं। 'जाति' विशेष का विरोध या जाति को खत्म करने की बात नहीं की गई, बल्कि 'जाति' और 'धर्म' के तालमेल से उत्पन्न मानवीय विषमताओं और ह्रसमान जीवन मूल्यों को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए जाति के आधार मिले विशेषाधिकारों को खत्म करने की बात भक्ति आन्दोलन ने उठाई।

जाति प्रथा के आधार पर ईश्वर की उपासना का जो विशेष अधिकार ऊंची जाति वालों ने अपने पास रख रखा था और पुरोहित तथा क्षत्रियों की साँठ–गाँठ के आधार पर जिसे बलपूर्वक मनवाया जाता था। उसे तोड़ने का अथक प्रयास भी भक्ति आन्दोलन ने किया और कहा कि ईश्वर से तादात्म्य के लिए मनुष्य के सद्गुण – प्रेम, सहिष्णुता, पवित्र ह्रदय, सादा–सरल जीवन और ईश्वर के प्रति अगाध विश्वास आवश्यक है न कि उसकी ऊँची जाति या ऊँचा सामाजिक, राजनैतिक या आर्थिक आधार।

धर्म निरपेक्षता

धर्म निरपेक्षता का मतलब यह नहीं है कि व्यक्ति किसी धर्म–विशेष से कोई सम्बन्ध न रखे। बल्कि इसका अर्थ यह है कि अपने धर्म पर निष्ठा रखते हुए भी व्यक्ति दूसरे धर्मों का सम्मान करे तथा अपनी धार्मिक नि ठा को दूसरे धर्मों में निष्ठा रखने वालों से जुड़ने में बाधा न बने। धर्मनिरपेक्षता एक जीवन मूल्य है जिसमें सहिष्णुता का गुण समाहित है। वर्ग, वर्ण, सम्प्रदाय तथा धर्मगत बन्धनों की अवहेलना करते हुए मनुष्य मात्र को ईश्वरोपासना का समान अधिकारी घोषित भक्ति आन्दोलन ने एक ऐसी धर्मनिरपेक्ष विचारधारा को जन्म दिया जो उस समय तो क्रांतिकारी थी ही आज भी इस विचारधारा को भारतीय समाज व्यावहारिक स्तर पर नहीं अपना पाया है।

भक्ति आन्दोलन के सभी सूत्रधारों में यह जीवन–मूल्य कमोवेश पाया जाता है। कबीर ने तो मानो इस विचारधारा को जन–जन तक पहुँचाने का बीड़ा उठा रखा था। वे जानते थे कि इसे पाना आसान नहीं है, नहीं होगा तभी उन्होंने शर्त रखी जो अपना 'सर' काटकर रखने की क्षमता रखता हो या अपना उन्होंने फूंकने की क्षमता रखता हो वही कबीर की इस धर्मनिरपेक्ष विचारधारा के साथ चल सकता है।

कबीरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ।
जो घर जारे आपना, चले हमारे साथ।।

जायसी इस विचारधारा को साहित्यिक स्तर पर अभिव्यक्त करते हैं। अपने मजहब के प्रति ईमानदारी रखते हुए भी उन्होंने दूसरे धर्ममतों को आदर दिया और जिसे मनुष्यता का सामान्य ह्रदय कहते हैं, या जिसे मनुष्यत्व की सामान्य भूमि कहते हैं, उस जमीन पर, जिससे भी मिलें, मनुष्य के नाते मिलें, बिना किसी भेदभाव के।

भारत के सांस्कृतिक इतिहास में पहली बार अंत्यजों और पीड़ित–शोषित वर्गों ने अपने संत दिए और इन संतों ने प्रथम बार साहसपूर्वक सम्पूर्ण आस्था और विश्वास से धर्म–जाति और वर्ण–सम्प्रदायगत बन्धनों को तोड़ते हुए मानव धर्म तथा मानव संस्कृति का गान गाया।

सामाजिक उत्पीड़न और अंधविश्वासों का विरोध

भक्ति आन्दोलन ने एक लम्बी लड़ाई–अपने प्रारंभ से अंत तक–लड़ी वह थी, सामाजिक उत्पीड़न और जन सामान्य में व्याप्त अंधविश्वासों के विरुद्ध। कबीर इस युद्ध के उद्घोषक थे। उन्होंने इसे स्वयं की स्वयं को दी हुई चुनौती के रूप में स्वीकार किया और अपने तरकश के सभी तीर चलाए, तुक्का नहीं लगाया। कहीं–कहीं तो ऐसा लगता है कि कबीर अकेले खड़े हैं सामने चुनौती झेलने वाला कोई नहीं पर लड़ाई किसी व्यक्ति या शासक के विरुद्ध नहीं थी। लड़ाई थी उस गलीच विचारधारा और सोच के विरुद्ध जिसके आधार पर सदियों से मानवता का शोषण किया जा रहा था उसे उत्पीड़ित किया जा रहा था और मनुष्य जिसे अपनी नियति मानकर जी रहा था। कबीर ने कहा कि "यह हमारी नियति नहीं, हमारा शोषण है, मानवता के प्रति अभिशाप है, किसी धर्म में इसका कोई आधार नहीं है।" नियति और धर्म के नाम पर थोपे गए अंधविश्वासों का उन्होंने धर्म और ईश्वर के आधार पर ही खण्डित किया और ज्ञान का प्रकाश प्रकाशित किया। इसी कारण उन्होंने सच्च गुरू का महत्व प्रतिपादित किया।

"आगे थे सतगुर मिल्या, दीया दीपक हाथ"

निर्गुण ब्रह्म की उपासना

कवि कबीर का ब्रह्म निर्गुण है। वह अजन्मा और अनाम है। इन्होंने राम की उपासना पर बल दिया है :–

निर्गुन राम जपहु रे भाई।
अविगत की गति लखी न जाई।

कबीर के राम दुष्ट–दलन रघुनाथ नहीं हैं। इनकी राम के विषय में अवधारणा है

दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना।
राम नाम का मरम है आना।।

कबीर के अनुसार, वह परम तत्व पुष्प गंध से भी पतला है तथा उसके मुँह या रुपरेखा कुछ भी नहीं है।

बहुदेववाद व अवतारवाद का विरोध

कबीर एक ईश्वर में विश्वास रखते थे। एक ईश्वर सर्वव्यापक है। सभी धर्मों, मतों आदि का मार्ग अंततः इसी ओर जाते हैं। नामों के आधार पर संघर्ष व्यर्थ है। एक ही ईश्वर से सबकी उत्पत्ति होती है और फिर सब उसी में लीन हो जाते हैं

प्राणी ही ते हिम भया हिम हवै गया बिलाइ।
जो कुछ था सोई भया अब कुछ कहा न जाइ।।

माया का विरोध

कबीर ने माया को ईश्वर प्राप्ति में बाधक माना है। माया में पड़ा व्यक्ति अपनी ही बात सोचता रहता है। ब्रह्म की प्राप्ति हेतु माया का त्याग अनिवार्य है।

जब मैं था तब हरि नहीं,
अब हरि है मैं नाहीं।।

माया का दूसरा नाम अज्ञान है। माया की उत्पत्ति का स्थान मन है। वे माया से बचने का उपाय संसार से विमुख रहना बताते है। कबीर कहते हैं

औंधा घड़ा न जल मैं डूबे सूधा सूभर भरिया।
जाकौं यह जब धिनकर चालै ना प्रसादि निस्तरिया।।

अध्ययन के उद्देश्य

1. कबीर की साधना के अध्ययन के लिए
2. कबीर के निर्गुण ब्रह्म की उपासना के अध्ययन के लिए

साहित्य की समीक्षा

संतकाव्य परंपरा के सर्वप्रमुख कवि कबीर थे। वे अपने समय के सच्चे प्रतिनिधि थे। वे एक सच्चे साधक, निष्ठावान भक्त, उच्चकोटि के कवि तथा प्रगतिशील समाज सुधारक थे। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उनका वर्णन इस प्रकार किया है–

"ऐसे थे कबीर। सिर से पैर तक मस्तमौला, स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़, भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचंड, दिल के साफ, दिमाग से दुरुस्त, भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अस्पृश्य कर्म से वंदनीय थे।"

कबीर अपूर्व प्रतिभासंपन्न कवि थे। इनके काव्य में भाव और विचार, तथ्य और कल्पना, भाषा और अलंकार का आश्चर्यजनक रूप में समन्वय हुआ है। इन्होंने मध्य युग में वैसा ही महान् कार्य किया जैसा आधुनिक युग में स्वामी दयानंद, विवेकानंद आदि ने किया। डॉ. सरनामसिंह के अनुसार, 'जिस प्रकार नारियल या बादाम को ऊपर से देखकर उसके भीतरी स्वरूप का विश्लेषण नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार कबीर के बाह्य रूप को देखकर उनकी भर्त्सनामयी कठोर वाणी को पढ़कर, उसके कोमल दयालु अंतर का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। उनके व्यक्तित्व की भावनाओं में सरल व गूढ़–दोनों रेखाओं का अनूठा मिलन है।'

जॉर्ज ग्रियर्सन ने भक्ति आंदोलन पर विचार करते हुए लिखा था कि इसका आगमन 'बिजली की चमक के समान अचानक' हुआ था। लेकिन हम बता चुके हैं कि भक्ति आंदोलन का आरंभ कोई आकस्मिक घटना नहीं थी। 14वीं–15वीं सदी में भक्ति आंदोलन के जन्म से पहले ही दक्षिण में भक्ति का व्यापक प्रसार हो चुका था। यह सही है कि भक्ति आंदोलन का उदय तत्कालीन परिस्थितियों की देन था, लेकिन इस पर विभिन्न धार्मिक मतों के प्रभाव से भी इंकार नहीं किया जा सकता। भक्ति आंदोलन 14वीं से 17वीं सदी के बीच विद्यमान रहा है। इसमें कई धाराएं और उप–धाराएं रही है। हम इनका अध्ययन आगे करेंगे। इससे पहले हमें भक्ति काव्य की सामान्य विशेषताओं का अध्ययन अवश्य कर लेना चाहिए ताकि हम इस बात को अच्छी तरह समझ सकें कि भक्ति काव्य की मामान्य आधारभूमि क्या है।

अनुसंधान क्रियाविधि

द्वितीयक स्त्रोत

माध्यमिक डेटा कई संसाधनों से एकत्र किया जाता है जैसे विभिन्न पुस्तकालयों, पुस्तकों, शोध पत्रिकाओं, इंटरनेट, पत्रिका और समाचार पत्रों में साहित्यिक कॉलम, आधिकारिक वेबसाइट

डेटा विश्लेषण

भक्ति आन्दोलन में कबीर का योगदान

भक्ति आन्दोलन वह आन्दोलन है जिसमें भागवत धर्म के प्रचार और प्रसार के परिणामस्वरूप भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। भक्ति आन्दोलन ने जन सामान्य को सम्मानपूर्वक जीने का रास्ता दिखाया, आत्मगौरव का भाव जगाया और जीवन के प्रति सकारात्मक आस्थापूर्ण दृष्टिकोण विकसित किया। देश की अखण्डता और समस्त देशवासियों के कल्याण तथा मानव के समान अधिकारों को अभिव्यक्ति दी। भक्ति आन्दोलन के सम्बन्ध में शिवकुमार मिश्र लिखते हैं–

"यह भक्ति आन्दोलन, सच पूछा जाए तो अपने समय की राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक परिस्थितियों की अनिवार्य देन था। वह युग जीवन की ऐतिहासिक मांग बनकर आया। इस तथ्य का अनुमान महज इस बात से लगाया जा सकता है कि इसने न केवल अपने समय की राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक जड़ता को तोड़ा, चली आती हुई सांस्कृतिक जीवन की धारा के साथ विजेताओं की नई संस्कृति को घुलाते–मिलाते हुए पहली बार जाति, धर्म, वर्ग, वर्ण आदि से निरपेक्ष एक मानव धर्म तथा एक मानव संस्कृति की परिकल्पना सामने रखी। इसने शताब्दियों से कुंठित और अपमानित देश के करोड़ों–करोड़ साधारण जनों के लिए उनकी सामाजिक मुक्ति तथा आध्यात्मिकता के द्वार भी उन्मुक्त कर दिए, समाज तथा धर्म के ठेकेदारों ने जिन्हें उनके लिए कब का बन्द कर रखा था। इस आधार पर यदि यह कहा जाए कि एक स्तर पर यह भक्ति–आन्दोलन रूढ़िग्रस्त धर्म तथा उसके द्वारा अभिशप्त एक अनैतिक और अमानवीय समाज व्यवस्था के प्रति सामान्य जन के सात्विक शेष तथा उसकी दुर्दम जिजीविषा की भावात्मक अभिव्यक्ति था, तो अतिशयोक्ति न होगी।

इन परिस्थितियों में कबीर के आविर्भाव को रेखांकित करते हुए शिवकुमार मिश्र लिखते हैं:

"समझौते का रास्ता छोड़कर विद्रोह का रास्ता अपनाते हुए निर्गुण भक्ति की जो धारा भक्ति–आन्दोलन की स्त्रोतस्वनी से फूटी कबीर उसकी सबसे ऊँची लहर के साथ सामने आए। समझौता उनकी प्रकृति में नहीं था। विद्रोह और क्रांति की ज्वाला उनकी रग–रग में व्याप्त थी सिर पर कफन बाँधकर, अपना घर फूंककर वे अलख जगाने निकले थे। उन्हें समझौता परस्तों की नहीं, अपना घर फूंककर साथ चलने वालों की जरूरत थी वे लुकाठी लिए सरे बाजार गुहार लगा रहे थे।

कबीरा खड़ा बाजार में लिए लुकाठी हाथ।
जो घर जारे आपना चले हमारे साथ।

भक्ति आन्दोलन के व्यापक पटल पर कबीर का मूल्यांकन और उनका योगदान रेखांकित करने के लिए हमें कबीर को अन्दर से देखना–परखना होगा, क्योंकि कबीर ऊपर से एक नजर में जो दिखते हैं उससे कहीं अधिक वो हैं। कबीर को केवल दार्शनिक, निर्गुण ब्रह्म के प्रतिपादक, समाज सुधारक, हिन्दू–मुस्लिम एकता और समन्वय के पुरोधा तथा एक संत के रूप में देखना कबीर के साथ अन्याय करना होगा।

कबीर का मूल्यांकन उन "मूल्यों के आधार पर करना चाहिए जिन्हें विकसित और पल्लवित करने के लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया। उस वैचारिक पृष्ठभूमि के आधार पर करना चाहिए जिसके आधार वे अकेले इतना जबर्दस्त विद्रोह कर सके। तमाम सामन्तीय जीवन प्रणाली और पुरोहिती दंभ के विरुद्ध जन सामान्य की प्रतिष्ठा और आत्मसम्मान की घोषणा कर सके। सदियों से अनुप्राणित उस कठोर जमीन को तोड़ने और एक नई उर्वर जमीन को बनाने के प्रयास के आधार पर करना चाहिए जिसे उन्होंने अपने रक्त के आँसुओं से सींचा।

सोई आँसू साजणां, सोई लोक बिडाहिं।
जे लोइण लोइ चु, तो जाणो हेत हियाहिं।।

कबीर का मूल्यांकन उनकी इस करुणा के आधार पर करना चाहिए जो समस्त मानवता के प्रति थी। चुपचाप खा–पीकर चैन से सोने वाले इस संसार की सदियों की इस नींद पर, इस जड़ता पर अन्याय को चुपचाप सहने की आदत पर और भविष्य के प्रति उदासीनता की सोच पर कबीर रात–रात भर जागते हैं और आँसू बहाते हैं।

सुखिया सब संसार है, खावे औ सोवे।
दुखिया दास कबीर है, जागै औ रोवे।।

यहाँ कबीर जाग रहे हैं और रो रहे हैं शेष सब खा रहे हैं और सो रहे हैं। कबीर का यह जागना और रोना बहुत महत्वपूर्ण है। वास्तव में कबीर देश के सांस्कृतिक नवजागरण के अग्रदूत थे। डॉ. रामविलास शर्मा ने भक्ति युग को प्रथम नव–जागरण की संज्ञा दी है। कबीर इस नवजागरण के पुरोधा थे। कबीर ने अपने समय में जिस युग सत्य का साक्षात्कार किया था उसे देखकर कबीर जैसा संवेदनशील नि ठावान व्यक्ति रो ही सकता है। कबीर के विद्रोही होने का एक कारण यह रुदन भी है।

कबीर अहंकार से मुक्ति में मानव–जीवन की बृहत्तर सार्थकता देखते हैं। अहं से मुक्ति उनकी प्रखर विचारधारा से जुड़ा प्रश्न है, चूँकि मध्यकालीन समाज अहं परिचालित कबीर का मूल्यांकन उन "मूल्यों के आधार पर करना चाहिए जिन्हें विकसित और पल्लवित करने के लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया। उस वैचारिक पृष्ठभूमि के आधार पर करना चाहिए जिसके आधार वे अकेले इतना जबर्दस्त विद्रोह कर सके। तमाम सामन्तीय जीवन प्रणाली और पुरोहिती दंभ के विरुद्ध जन सामान्य की प्रतिष्ठा और आत्मसम्मान की घोषणा कर सके। सदियों से अनुप्राणित उस कठोर जमीन को तोड़ने और एक नई उर्वर जमीन को बनाने के प्रयास के आधार पर करना चाहिए जिसे उन्होंने अपने रक्त के आँसुओं से सींचा।

हद चले सो मानवा, बेहद चले सो साथ।
हद बेहद दोऊ तजे, ताकर मता अगाथ।।

सहजता और सहिष्णुता जैसे मानवीय मूल्य अहं के साथ नहीं चल सकते। इन मूल्यों के अभाव में न ईश्वर मिल सकता और न सांसारिक सुख। कबीर के यहाँ 'श्राम' ईश्वरत्व की अपेक्षा उच्चतर मूल्य–समुच्च के प्रतीक हैं।

'कबीर श्राम' यानि मानवीय मूल्यों को पाने का जो रास्ता बताते हैं वह है प्रेम का। कबीर के यहाँ प्रेम भी एक जीवन मूल्य के रूप में प्रतिपादित हैः

पोथी पढ़ि जग मुआ, पण्डित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पण्डित होय।।

इस प्रेम की अर्थ व्यंजना गहरी है और इसका आधार ईमानदार संवेदन है जो आचार–विचार की मैत्री के लिए आवश्यक है। कबीर प्रेम को कई तरह से परिभाषित करते है

कबीर यह घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे भुई घरे, सो घर पैठे आहिं।।

प्रेम के घर में बैठने के लिए जो शर्त है वह प्रेम को उस जीवन मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित करती है जिसके बिना जीवन चल नहीं सकता। सीस काटकर जमीन पर रखने की क्षमता हो तो प्रेम को पा सकते हो।

प्रेम न खेतो नीपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा–परजा जिस रुचौ, सिर दे सौ ले जाय।।

प्रेम के मार्ग में सम्पूर्ण समर्पण की बात कबीर बार–बार करते हैं, यह बात ध्यान देने लायक है। सम्पूर्ण भक्ति काव्य में ही नहीं हिन्दी साहित्य में बहुत कम कविताओं में प्रेम के लिए सिर काट कर रखने की शर्त मिलेगी। भक्ति काव्य में अन्य कवियों ने प्रेम में प्रिय के प्रति समर्पण की बात तो चित्रित की है, परन्तु प्रेम के लिए दुर्दम शर्त सिर्फ कबीर ही रख सकते थे। इसका कारण था यहाँ यह प्रेम व्यक्तिगत भावना या किसी एक के प्रति तरल भावनात्मक अनुभूति मात्र नहीं है। यहाँ तो वह एक ऐसी विचारधारा है, एक ऐसा दृष्टिकोण है, एक ऐसा सूत्र है जिसके आधार पर ही मानव–मानव कहा जा सकता है। आपस में मनु य सत्य को लेकर जी सकता है। कबीर ने एक ऐसे देश की कल्पना की जहाँ मनु य मात्र समानता के सिद्धान्त पर जिये जहाँ कोई ऊँच–नीच, भेद–भाव कोई विषमता और विश्रृंखलायें न होंः

अवधू, बेगम देश हमारा
राजा रंक फकीर–बादसा, सबसे कहाँ पुकारा।
जो तुम चाहो परम पद को, बसिहों देस हमारा।।

कबीर का यह आध्यात्मिक देश उच्चतम मानव मूल्यों का देश है। सामाजिक स्तर पर जहाँ व्यक्ति का सामाजिक चेतना में पर्यवसान होना ही मानवीय मूल्यों का प्रतीक है।

निष्कर्ष

कबीर मध्यकाल के बहुत बड़े विचारक और समाज सुधारक कवि थे साहित्य के इतिहासकारों और आलोचकों ने उनके काव्य का मूल्यांकन करते हुए इस तथ्य का प्रतिपादन किया है। कबीर को ऐतिहासिक संदर्भ से विश्लेषित करें तो वे तत्कालीन परिस्थितियों से प्रतिबद्ध दिखाई देते हैं। उनकी यह प्रतिबद्धता उस समय की जागरूकता से जुड़ी हुई थी। उन्हें इसी दृष्टि से समाज सुधारक की संज्ञा भी दी जाती है। यह भी सच है कि भक्ति आंदोलन समाज सुधार का आंदोलन था और समस्त संत कवि समाज सुधारक थे। वे समाज के विभिन्न शिथिल परम्पराओं, रूढ़ियों और जाति–पाँति को समाप्त कर स्वस्थ समाज की रचना करना चाहते थे। उनके काव्य में सरल, सहज और व्यावहारिक जीवन

जीते हुए मानवतावाद की प्रेरणा ली गई है। इसी कल्पना में कबीरदास कहीं–कहीं पर क्रांतिकारी रूप में सामने आते हैं।

सन्दर्भ

1. डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा 1977
2. डॉ. श्री निवास शर्मा, हिन्दी साहित्य का इतिहास, तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली 1978
3. डॉ. किशोरी लाल, घनानंद काव्य एवं आलोचना, साहित्य भवन, इलाहाबाद 1980
4. डॉ. महेन्द्र कुमार, रीतिकालीन रीति कवियों का काव्यशिल्प आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली काव्य शिल्प 1980
5. डॉ. प्रतिभा चतुर्वेदी, डॉ. हरिमोहन बुधोलिया, डॉ. सरला मिश्रा, हिन्दी भाषा साहित्य का इतिहास, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ एकेडमी तथा काव्यंग विवेचन भोपाल, 2005
6. कबीर गंगावली संव डॉ. श्यामसुंदर दास वाराणसी, सं. 20341
7. कबीर ग्रंथावली डॉ. पारसनाथ तिवारी पयाय, 19618
8. कबीर ग्रंथावली डॉ. माता प्रसाद गुप्त आगरा, 19693
9. संत कबीर संव डॉ. रामकुमार वर्मा इलाहाबाद, 19661
10. कबीर पीक सं. डॉ. मुकदेव सिंह इलाहाबाद, 19721
11. कबीर बाडस्य सं. डॉ. अपदेव सिंह, डॉ. वासुदेव सिंह वाराणसी, 1980